Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

वैदिक संस्कृति में संगीत चिकित्सा (म्यूजिक थैरेपी)

डॉ0 अनिल कुमार शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
चौ0 शिवनाथ सिंह शाण्डिल्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय, माछरा, मेरठ,उत्तर प्रदेश।

सारांश– विश्व भर में सर्वाधिक प्राचीन 'वैदिक साहित्य' है। जीवन के सभी नैतिक–अनैतिक मूल्यों का समाधान वेदों में प्राप्त होता है। भारत या विश्व में जितने सम्प्रदाय धर्म एवं मतमतांतर हैं, वे सभी वैदिक पृष्ठभूमि पर ही स्थापित हुए। 'ऐतिहासिक दृष्टि से सभ्यता का विकास क्रम का यह एक प्रकार है, कि यूरोप में सभ्यता रोम और यूनान के सम्पर्क से पहुँची। रोम में यूनान के द्वारा सभ्यता का उन्मेष हुआ। यूनान में भारत और मिस्त्र से सभ्यता पहुँची मिस्त्र को भारत ने सभ्यता का पाठ पढाया, इस तथ्य को सभी इतिहासज्ञ स्वीकार करते हैं।' वैदिक साहित्य, जीवन के विभिन्न किया–कलापों की एक विशाल संहिता है। वेदों की एक शाखा आयुर्वेद भी कही गई है जो 'अथर्ववेद' का मुख्य अंग है। आयुर्वेद को पाँचवा वेद इसलिए कहा गया है, क्योंकि इसमें शरीर –मन–इंद्रिय और आत्मा का संयोग है। जिस प्रकार नाठयशास्त्र यानी संगीत का मूल आधार स्वरों का मंद्र– मध्य तथा तारता है, उसी प्रकार आयुर्वेद या वैधशास्त्र में वात–कफ–पित्त के स्वरूप में संतुलन होना आवश्यक है। मानव मन कभी एकरस नहीं रहता, या तो वह उन्नति की ओर अग्रसर होगा या अवनति की ओर लुढकेगा। यदि मन को सही दिशा–निर्देश मिलता है, तो उसके अनुरूप व्यक्ति अपने आपको ढाल लेने का प्रयत्न करता है। सरोदवादक तरुण महाचार्य ने स्वर–सरिता जयपुर में उल्लेख दिया है– किसी राजा को गाते हुए या किसी को सुनते हुए यदि दो पल का सुकून मिलता है, तो यही 'म्यूजिक थैरेपी' हैं। निःसंदेह संगीत की मेलोडीज यदि हमें अंतरत्म से प्रभावित करती है तो इसे ही 'म्युजिक थैरेपी' समझना चाहिए। कला और विज्ञान का परस्पर मेल ही संगीत – चिकित्सा या 'म्यूजिक थैरेपी' है। जीवन को सुखमय बनाने के लिए ही मनोचिकित्सकों वैज्ञानिकों और मनोवैज्ञानिकों ने संगीत को चिकित्सा से जोड़ा है, लेकिन उस संगीत को जिसमें आध्यात्म, दर्शन और धर्म की गहराई हो। म्यूजिक थैरेपी में संकल्प की दृढता होना भी जरुरी है जिसके लिए सत्संग होना चाहिए। संगीत और उपासना का परस्पर अटूट सम्बन्ध रहा है। इसी कारण उपासना म्यूजिक थैरेपी का विशेष अंग माना गया है। डा० प्रवेश सक्सैना अपनी पुस्तक 'वेदो में क्या है' में लिखते हैं, कि 'वेदो में ओइम्' इन अक्षरों का महत्व है। सभी वेदों का सार ओइम को बताया गया है। ढाई अक्षर का यह शब्द तीन प्रकार की शांति को दर्शाता है– शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक। ओइम के उच्चारण या जाप से तनाव शिथिल होता है। मन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह एक ऐसी भाषा है, जो सबको समझ में आती है। ''मंत्र शक्ति के प्रयोग ऋषि–मुनियों ने आरम्भ से किये हैं। आज के वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं कि शब्द शक्ति इलैक्ट्रोनिक मैग्नेटिक लहरें, उत्पन्न करती हैं। जो स्नायु तंत्र पर वांछित प्रभाव डालकर उनकी सक्रियता को तो बढाती ही हैं, साथ ही विकृत चिंतन को भी रोकती है मनोविकारों को दूर करती है। एक ही मंत्र का बार–बार गायन करने पर कैसे तनाव भी धीरे–धीरे शिथिल होने लगता है। इस पर अनेक प्रयोग–परीक्षण किये जा चुके हैं, जिसे विदेशों में सायमैटिक्स अध्यन की परम्परा कहा जाता है।'' सच्चे सुर और लय का

संगीत ही मन के बिखरेपन को समेटकर सुकून देता है। इसी कारण मनोवैज्ञानिकों और चिकित्सकों ने मनोरोगों के उपचार हेतु ऐसे संगीत को स्थान दिया, जिसके प्रभाव हमारे अंत मन तक पहुंच सके।
मुख्य शब्द– वैदिक, संस्कृति, संगीत, चिकित्सा, नैतिक–अनैतिक, मूल्य।

विश्व भर में सर्वाधिक प्राचीन 'वैदिक साहित्य' है। जीवन के सभी नैतिक–अनैतिक मूल्यों का समाधान वेदों में प्राप्त होता है। भारत या विश्व में जितने सम्प्रदाय धर्म एवं मतमतांतर हैं, वे सभी वैदिक पृष्ठभूमि पर ही स्थापित हुए। 'श्रुतिसौरभ' नाम के ग्रंथ में लेखक पंडित शिवकुमार शास्त्री ने उल्लेख किया है– 'ऐतिहासिक दृष्टि से सभ्यता का विकास क्रम का यह एक प्रकार है, कि यूरोप में सभ्यता रोम और यूनान के सम्पर्क से पहुँची। रोम में यूनान के द्वारा सभ्यता का उन्मेष हुआ। यूनान में भारत और मिस्त्र से सभ्यता पहुँची मिस्त्र को भारत ने सभ्यता का पाठ पढाया, इस तथ्य को सभी इतिहासज्ञ स्वीकार करते हैं।' ऋक् यजु साम और अथर्व इन चर्तुवेदों की संहिताओं के पुंज को 'चतुर्वेद' कहा जाता है। जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नही है, जिसका विश्लेषण वेदों में न किया गया हो। कर्म काण्ड, भक्ति काण्ड और ज्ञान काण्ड के रूप में जीवन उपयोगी तमाम विचार और ज्ञान का भंडार, ये वैदिक संहिताएँ हैं जिसमें सर्वप्रथम शारीरिक–मानसिक और आत्मिक रुप से पुष्ट करने के निर्देश दिए गये हैं। इसीलिए वैदिक संस्कृति को समस्त विश्व के इंसान के जीवन–यापन कराने वाला प्राचीन और विशालतम साहित्य स्वीकार किया जाता है। विदेशी मैक्समूलर ने अपनी पुस्तक 'हम भारत से क्या सीख सकते हैं' में लिखा है– 'यदि किसी को मानव जाति का अध्ययन करना हो, या यों कह सकते हैं कि यदि किसी को आर्य जीवन के विषय में अध्ययन करना हो तो, उसके लिए वैदिक साहित्य का अध्ययन ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण होगा।'

वैदिक साहित्य, जीवन के विभिन्न किया–कलापों की एक विशाल संहिता है। वेदों की एक शाखा आयुर्वेद भी कही गई है जो 'अथर्ववेद' का मुख्य अंग है। आयुर्वेद को पाँचवा वेद इसलिए कहा गया है, क्योंकि इसमें शरीर –मन–इंद्रिय और आत्मा का संयोग है। अर्थात जिस शिल्प या विधा में आयु एवं जीवन के विभिन्न रोगो के उपचार की पद्धतियाँ हैं, वह आयुर्वेद हैं। इस संर्दभ में 1960 के वरिष्ठ ग्रंथकार श्री अत्रिदेव विधालंकार ने, अपने ग्रंथ "आयुर्वेद का वृहत इतिहास'' में उल्लेख दिया है। जिस प्रकार नाठयशास्त्र यानी संगीत का मूल आधार स्वरों का मंद्र– मध्य तथा तारता है, उसी प्रकार आयुर्वेद या वैधशास्त्र में वात–कफ–पित्त के स्वरूप में संतुलन होना आवश्यक है, जिसे एक आयुर्वेदशास्त्रज्ञ ही जान पाता है। इसी कारण शरीर के इन त्रिदोषों को प्राकृतिक जड़ी–बूटियों आदि से दूर किया जाता है। 'आयुर्वेद के वृहत इतिहास' ग्रंथ का आलेख है– रोग के दो अधिष्ठान हैं– 'मन' और 'शरीर'। मन के दो दोष हैं रज और तम'। अर्थात मानव देह रजस–तमस् और सात्विक भावों से बनी हुई है। यानी हमारे अंदर अच्छी प्रवृत्तियाँ भी होती हैं और दुष्प्रवृत्तियाँ भी। लेकिन यह स्वाभाविक है, कि रजस–तमस जैसे विकृत भाव खर–पतवार की भांति स्वतः उपजते रहते हैं। जैसे आप दो गमलों में मिटटी खाद–पानी दीजिए। एक गमले को ऐसे छोड़ दीजिए और दूसरे गमले में आप गुलाब आदि के पौधे लगाइए। आप देखेगें कि गुलाब आदि पौधे में आपको अधिक परिश्रम व समय लगाना पड़ेगा, तब कहीं वह पौधे अपनी जड़ पकड़ेंगे, लेकिन दूसरे गमले में खर–पतवार और घास स्वतः उग आयेगी। इसी प्रकार रजस–तमस के भाव में हर इंसान में हर समय संचरित होते रहेते हैं, बल्कि इन भावों को हम नकारात्मक तथा ऊल–जलूल भाव कहेगें जो हमारा निरर्थक चिंतन है, जबकि सत् या सात्विक स्वच्छ और निर्मल भावों को लाने में हमें अधिक परिश्रम व समय देना पड़ेगा। मनौवैज्ञानिक का मानना है कि मानव मन कभी एकरस नहीं रहता, या तो वह उन्नति की ओर अग्रसर होगा या अवनति की ओर लुढकेगा। यदि मन को सही दिशा–निर्देश मिलता है, तो उसके अनुरूप व्यक्ति अपने आपको ढाल लेने का प्रयत्न करता है। रजस–तमस की भावनाएं तो हर समय उसके अंदर रहती हैं। यदि व्यक्ति अपने आपको पहचानकर, अपनी विशेषताओं का सही आकलन करे, तो उसे अन्दर से

ही दिशा–निर्देश मिलता है और व्यक्ति अपनी सात्विक प्रवृत्तियों को बढाकर एक नायक या संत भी बन सकता है। अन्यथा व्यर्थ के चिंतन और दुष्चिंताओ से अपने समस्त जीवन को बेकार कर देता है।

सरोदवादक तरुण महाचार्य ने स्वर–सरिता जयपुर में उल्लेख दिया है– किसी राजा को गाते हुए या किसी को सुनते हुए यदि दो पल का सुकून मिलता है, तो यही 'म्यूजिक थैरेपी' हैं। निःसंदेह संगीत की मेलोडीज यदि हमें अंतरत्म से प्रभावित करती है तो इसे ही 'म्युजिक थैरेपी' समझना चाहिए। कला और विज्ञान का परस्पर मेल ही संगीत – चिकित्सा या 'म्यूजिक थैरेपी' है।

अथर्ववेद 9/27/8 का एक मंत्र है– 'भोगापवर्गाथ दृश्यम' अर्थात् संसार में आने का उददेश्य भोग तथा अपवर्ग है। यानी संसार में आकर यहां की प्रतिकूलताओं के लिए अपितु सम्पूर्ण समाज के लिए मार्ग प्रशस्त कर सुखद बनाना न केवल स्वंय के लिए अपितु सम्पूर्ण समाज के लिए मार्ग प्रशस्त कर उसे सुखद बनाना ही जीवन है। जीवन को सुखमय बनाने के लिए ही मनोचिकित्सकों वैज्ञानिकों और मनोवैज्ञानिकों ने संगीत को चिकित्सा से जोड़ा है, लेकिन उस संगीत को जिसमें आध्यात्म, दर्शन और धर्म की गहराई हो।

म्यूजिक थैरेपी में संकल्प की दृढता होना भी जरुरी है जिसके लिए सत्संग होना चाहिए। आचार्य तुलसी की रामचरित मानस में उल्लेख है – 'बिनु सत्संग, विवेक न होई राम कृपा बिनु सुलभ न सोई'। आज सत्संग की परिभाषा में साधु–संतों और महात्माओं की गोष्ठियां नही, बल्कि समझदार, ईमानदार और विद्वान व्यक्तियों का समागम, जहां विचारों की नई से नई क्रांन्ति हो, जिससे आज की पीढी में सम्वेदना का सम्प्रेषण हो तथा जिनकी कथनी और करनी का अंदाज उनके जीवन–दर्शन से मिलता हो। इसी को आज का सत्संग कहा जा सकता है जो बिना ईश्वर की कृपा के नहीं प्राप्त हो सकता। 'गीतिषु सामाख्या' का अर्थ है भक्तों की भावभरी स्वर लहरी जब फूटकर ऋचाओं के रुप में बाहर निकलती है तभी वह 'सम' बन जाती हैं। इसीलिए संगीत और उपासना का परस्पर अटूट सम्बन्ध रहा है। इसी कारण उपासना म्यूजिक थैरेपी का विशेष अंग माना गया है।

उपासना– उपासना शब्द का अर्थ है समीपस्थ होना यानी उप+आस+टाप प्रत्यय–उपासना, आत्मा के समीप बैठना 'उपासना' है। वेदों में लिखा है उपासना के लिए, एकान्त व शुद्ध स्थान पर जाकर आसन लगाना, तथा प्राणायम की स्थिति में बाहय विषयों से इंद्रियों को रोकना, तथा अपना ध्यान नाभि प्रदेश में, हृदय, कंठ, नेत्र, शिखा को एक स्थान पर स्थिर करके आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़कर संयमी बनना, वह वैदिक समय की प्रार्थना थी। उस समय चूंकि आश्रमों का माहौल था। सारा ध्यान चिंतन में लगा रहता था, लेकिन उपासना या प्रार्थना को यदि आधुनिक ढंग से लिया जाए, तो यह एक गोष्ठी या सेमीनार कहा जायेगा जिसमें समझदार और सुयोग्य प्रवचनकर्ता या प्रश्नकर्ताओं का सम्मेलन होगा। उसमें आज सभी बच्चे अपनी–अपनी बात कहने के लिए आयेगें, क्योकि आध्यात्मिक कोई धार्मिक या कर्मकाण्डी पहलू नहीं है, अपितु इसका अर्थ है, अपने को पहचानना।

इस संदर्भ में संत सुबोधनन्द जी ने मानस के मोती ग्रंथ में उल्लेख दिया है– ष्व्तंलमत पे दवज इमहहपदहए पज पे।द पदअवबंजपवदष अर्थात प्रार्थना कोई भिक्षा नहीं है, अपितु यह तो आवाहन है, उन्हे अप्रत्यक्ष रूप से बुलाना है, जिनके सामने हम अपनी बात रख सकते हैं। हमें विश्वास है, कि हमारी बात कोई नही सुनेगा और वह अवश्य सुनेगा।

डा० प्रवेश सक्सैना अपनी पुस्तक 'वेदो में क्या है' में लिखते हैं, कि 'वेदो में ओइम्' इन अक्षरों का महत्व है। सभी वेदों का सार ओइम को बताया गया है। ढाई अक्षर का यह शब्द तीन प्रकार की शांति को दर्शाता है– शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक। ओइम के उच्चारण या जाप से तनाव शिथिल होता है। मन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। वेदों का यह आलेख है, कि 'साम' यानी जीत उसी को प्राप्त होती है, जो किग्राशील, और विवेकी होता है। यह एक ऐसी भाषा है, जो सबको समझ में आती है। ''डा० प्रवेश पुनः लिखते हैं– 'मंत्र शक्ति के प्रयोग ऋषि–मुनियों ने आरम्भ से किये हैं। आज के वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं

कि शब्द शक्ति इलैक्ट्रोनिक मैग्नेटिक लहरें, उत्पन्न करती हैं। जो स्नायु तंत्र पर वांछित प्रभाव डालकर उनकी सक्रियता को तो बढाती ही हैं, साथ ही विकृत चिंतन को भी रोकती है मनोविकारों को दूर करती है।

एक ही मंत्र का बार–बार गायन करने पर कैसे तनाव भी धीरे–धीरे शिथिल होने लगता है। इस पर अनेक प्रयोग–परीक्षण किये जा चुके हैं, जिसे विदेशों में सायमैटिक्स अध्यन की परम्परा कहा जाता है।'' प्राचीन गेय स्तुतियां और प्रार्थनाओं के पीछे अभ्यास और साधना की सतत् श्रंखला बनी रहती है। स्वर और लय की रज्जू को पकड़कर न जाने कितने कवियो और कवयित्रयों ने भक्त गायक और गायिकाओं का स्वरुप धारण किया। इसी कारण चिकित्सा पद्धति में दूरदर्शन में गाये जाने वाले रियलिटी शोज के संगीत को न लेकर भारतीय शुद्ध शास्त्रोक्त और आध्यात्मिक संगीत को महत्व दिया गया, जो केवल मन–मस्तिष्क को बल्कि हमारी आत्मा को भी तुष्टि देते हैं।

सच्चे सुर और लय का संगीत ही मन के बिखरेपन को समेटकर सुकून देता है। इसी कारण मनोवैज्ञानिकों और चिकित्सकों ने मनोरोगों के उपचार हेतु ऐसे संगीत को स्थान दिया, जिसके प्रभाव हमारे अंत मन तक पहुंच सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. संगीत – चिकित्सा – डा० महारानी शर्मा
2. संगीतायन – डा० सीमा चौधरी
3. कलाविहार– पत्रिका
4. संगीत पत्रिका – लक्ष्मी नारायण गर्ग
5. संगीत बोध – डा0 शरत चन्द्र श्रीधर
6. ध्वनि और संगीत
7. संगीत शाखा 1958– के0 वासुदेव शास्त्री
8. नारदीय शिक्षा – मैसूर
9. भारतीय संगीत में वृन्दावन – डा० नारायण मेनन